International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 9, Issue 4, April - 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

नारीकाबदलतापरिदृश्य : स्वास्थ्य ,रोजगार,साहित्य, संस्कृति, संचारएवंमनोविज्ञान

सविताकुमारी
गृह विज्ञान विभाग
भूपेंद्र नारायण मण्डल विश्वविद्यालय, मधेपुरा (बिहार)

हेयायआर्य, हे अनार्य, हेयायद्राविड़– चीन
शक-हूण दल, पाठान-मोगल, एक देहे होलो लीन![1]

-रामधारी सिंह 'दिनकर'

परिवर्तन संसार का सबसे अनिवार्य और नैसर्गिक प्रक्रिया है | परिवर्तनकी इस प्रक्रिया को गाहे-ब -गाहे हम 'नियम' भी कह देते हैं | साहित्यएवं संस्कृति, और इनके वाहक सूक्ष्म अवयव- संचार; और कालांतर में इन सबके सम्मिलन से परिवर्तित होता 'मनोविज्ञान', समय के दो विपरीत प्रक्रियाओं के अधीन होकर विकसित हो रही होती हैं | एक प्रक्रिया साहित्य एवं संस्कृति को नियमों में बाँधने का व्यूह रचता है; छंद, अलंकार, काव्य-रूप, संधि, समासआदिके व्याकरण में बद्ध कर साहित्य को व्यवस्थित, अलंकृत, सुशोभित, तथाकथित शिष्ट बनाने के सफल या असफल मानवजन्य कोशिश करता है; वहीं साहित्य अपनी नैसर्गिक एवं प्राकृतिक रूप में सतत परिवर्तनशील होकर छन्दमुक्त, अलंकारमुक्त, वैयाकरणिक नियमों की बेड़ी से स्वयं को स्वतंत्र कर विश्व के नानारूपों, नानाविध अविकसित एवं स्वतंत्र स्वरूपों में शामिल होना चाहता है | हिंदी-साहित्य में कविता की छंदों से मुक्ति की घोषणा करने वाले *निराला* लिखते हैं-

टूटेंसकलबन्ध
कलि के, दिशागत हो बहे गन्धा-ज्ञान-[2]

[1]रामधारी सिंह दिनकर, 1962, संस्कृति के चार अध्याय, उदयाचल प्रकाशक, आर्यकुमार रोड, पटना, समर्पण पृष्ठ से
[2]सूर्यकांतत्रिपाठी निराला, 1992, गीतिका, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ सं- 104

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 9, Issue 4, April - 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

वैदिक-साहित्य एवं भाषा मुक्त हुआ करतीं थीं | वेदों ने मनुष्य को भाषा का सर्वप्रथम सुंदर प्रयोग सिखाया होगा, यह मानना तर्क से परे लगता है | वेदों की भाषा जैसी समृद्ध एवं कर्णप्रिय हैं, वैसी परिपक्वता तक पहुँचने के लिए उस काल की संस्कृत भाषा को सैंकड़ों वर्षों का मौखिक अभ्यास एवं वाक् परंपरा में ही निरंतर परिवर्धनशील होते रहना पड़ाहोगा | वेदों के विषय जितने वैज्ञानिक एवं चिंतनशील जान पड़ते हैं, उनकी भाषा छन्दबद्ध होते हुए भी मुक्त मालूम पड़ती है| *यहाँ यह भी ध्यान देने की बात है कि वैदिक युग के आर्य इतने अमर्ष हीन नहीं थे, न उनकी स्वाधीन चिंता इतनी दबी हुई थी | ऋग्वेद के नासदीय सूक्त में ऋषि ने प्रश्न उठाया है कि जब कुछ नहीं था, तबक्या था और सृष्टि उस शून्य में से कैसे प्रकट हुई औरसृष्टि जब शून्य में से निकल रही थी, तब उसे किसने देखा था| और ऋषि ने स्वयं ही उत्तर दिया है कि इस सृष्टि का जो अध्यक्ष परम व्योम में रहता है, शायद उसने सृष्टि को जन्म लेते देखा हो अथवा क्या पता कि उसने भी नहीं देखा हो* |[3]बहरहाल, वेदों ने भारतीय-साहित्य को जैसी उन्मुक्त भाषा एवं विषयों में विविधता दिया था, कालांतर में वह भाषाई आज़ादी एवंविषयगत स्वतंत्रता भारतीय-साहित्य में गौण होता दिखाई देता है | 'गीतिका' की भूमिका में साहित्य और संगीत पर टिपण्णी करते हुए निराला ने लिखा है कि जिस तरह वेदों के बाद मुक्त भाषा व्याकरण में बंधती गई और अनेकानेक रूपों से वेदों से भावजन्य सामंजस्य रखती गई है, उसी प्रकार संगीत संस्कृत में आकर, छंद-ताल-वाद्य आदि में बंध गया है|[4]

वैदिक-काल के बाद शुरू हुई य ह परंपरा अनवरत बिना किसी विरोध के आगे बढ़ती रही, ऐसानहीं है | दरअसल, संस्कृत की यह व्याकरणिक बद्धता ही रही है जिसके विकल्प में कालांतर में प्राकृत, पालि और उनके क्रमशः अपभ्रंश रूपों का विकास होता गया| दरअसल,प्राचीन आर्यभाषा- काल में जनभाषा पर आधारित 'वैदिक' एवं'लौकिक' –संस्कृत भाषा के ये दो रूप साहित्य में प्रयुक्त हुए | *'लौकिक संस्कृत ' को पाणिनि ने अपने व्याकरण में जकडकर उसे सदा-सर्वदा के लिए एक स्थायी रूप दे दिया, किंतु जनभाषा(और साहित्य) भला इस बंधन को कहाँ मानती ? वह अबाध गति से परिवर्तित होती रही, बढ़ती रही* |[5]

व्याकरण एवं भाषाई-स्वतंत्रता के दो ध्रुवों के बीच भारतीय-साहित्य लौकिक-संस्कृत-काल से संघर्ष करता रहा है, औरसंघर्ष के इस समुद्र-मंथन नेअनेक बेहद बेशकीमती और महत्त्वपूर्ण भाषा, साहित्य एवं साहित्यकारों को जन्म दिया है | जीवन की जटिल सच्चाइयों को कल्पना के कलेवर में लपेटकर भिन्न-भिन्न विधाओं के द्वारा लोकमानस के बीच परोसकर मनुष्य जाति को अपने परिवेश और खुद के प्रति आस्थावान बनाए रखने का, प्रकृति प्रदत्त उत्स को जीवित रखने का ,अपनी भाषिक एवं विषयगत विविधताओं कोदरकिनारकरहर एक दौर में मानव को इंसान बनाए रखने का निरंतर उपक्रम कर ने का जैसा पुनीत कार्य साहित्य ने किया है, निस्संदेह ही भारतीयचेतना इस अनुराग के लिए विशद भारतीय-साहित्य काऋणी रहेगा| इस कोरोना-काल में, जब मानवीय-

[3]रामधारीसिंह 'दिनकर', 2008, साहित्य और समाज, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, पृष्ठ सं-12
[4]सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला', 1992, गीतिका, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ सं- 11
[5]डॉभोलानाथ तिवारी, 2005, हिंदी भाषा, किताब महल, इलाहाबाद, पृष्ठ सं- 12-13

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 9, Issue 4, April - 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

जिजीविषा को अपनी सदी की सबसे त्रासदस्थिति से गुजरना पड़ रहा है, भारतीय -साहित्य का बहुभाषिक, बहुवैकल्पिक और बेहद विस्तृतअतीत हम भारतीयों को ही नहीं, समूचे विश्व का पीठ सहलाते हुए भरोसादिलाता है कि

क्या घड़ी थी, एक भी चिंता नहीं थी पास आई
कालिमा तो दूर, छाया भी पलक पर थी न छाई
आँख से मस्ती झपकती, बात से मस्ती टपकती
थी हँसी ऐसी जिसे सुन बादलों ने शर्म खाई
वह गई तो ले गई उल्लास के आधार, माना
पर अथिरता पर समय की मुस्कराना कब मना है
है अँधेरी रात पर दीवा जलाना कब मना है।[6]

समय ने जब-जब मनुष्य को चिंताओं में, दुःख में, संताप में, विरह में डाला है, साहित्य ने मनुष्य के लिए जीवन के नए दरवाजे खोल दि ये हैं | इस महामारी के समय में, जब हम सब *मेघदूतम* के दक्ष के तरह अपने करीबियों,कुटुम्बियों, स्वजनों , नातेदारों , रिश्तेदारों ,मित्रोंसे दूर होने को बाध्य हो गए हैं, आभासी दुनिया हमारे सामने*मेघदूत* सा बनकर आया है-

प्रत्यासन्नेनभसि दयिताजीविताालाम्बनार्थी
जीमूतेन स्वकुशलमयीं हारयिष्यन्प्रवृत्तिम् |[7]

तमाम बदलावों के बीच सम्पूर्ण भारतीय-साहित्य को जो एक तत्त्व एकसूत्र में बाँधता आया है , वह है जीवन के प्रति अपार आस्था | 'मोह' और 'आस्था' परस्पर पर्याय से लगते हुए भी एक दूसरे से जो अलग भाव रखते हैं , उसके पीछे भी कारक भारतीय दर्शन-परंपरा से पोषित वह भारतीय दृष्टि है , जो भक्तिकाल के संत कबीर को 'मोह''माया' आदि से विलगाव के बावजूद भी जीवन के प्रति आस्थावान बनाए रखता है-

नाचु रेमेरे मन मत्त होय|
प्रेम को राग बजाय रैन-दिन शब्द सुनै सब कोई |
राहु-केतु नवग्रह नाचै जन्म जन्म आनंद होइ |
गिरी-समुंदर धरतीनाचै, लोक नाचै हँस रोइ |
छापा-तिलक लगाइ बाँस चढ़, होरहा जग से न्यारा|
सहस कला कर मन मेरी नाचै, रीझै सिरजनहारा |[8]

---

[6]हरिवंशराय बच्चन, 1983, कुमार अजित(संपा(, *बच्चन रचनावली* भाग-1, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ 311
[7]कालिदास,हजारीप्रसाद द्विवेदी (संपा), 2009, मेघदूत: एक पुरानी कहानी, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ सं-15
[8]हजारीप्रसाद द्विवेदी, 2019, कबीर, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ सं- 198

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 9, Issue 4, April - 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

हिंदी साहित्य का इतिहास के वक्तव्य में आचार्य रामचंद्र शुक्ल संकेत करते हैं कि *शिक्षित जनता की जिन-जिन प्रवृत्तियों के अनुसार हमारे साहित्य स्वरूप में जो जो परिवर्तन होते आए हैं, जिन-जिन प्रभावों की, प्रेरणा से काव्य-धारा की भिन्न-भिन्न शाखाएँ फूटती रही हैं, उन सबके सम्यकनिरूपण तथा उनकी दृष्टि से किये हुए सुसंगत कालविभाग के बिना साहित्य के इतिहास का सच्चा अध्ययन कठिन दिखाई पड़ता था* |[9] भारतीय-साहित्य का विशद इतिहास अपनी समसामयिक जनता की प्रवृत्तियों के अनुकूल परिवर्तित होती रही हैं, और अपनी भिन्न-भिन्न शाखाओं के माध्यम से उसने दूरगामी प्रभाव छोड़ा है | इसके विस्तृत अतीत की यात्रा जितनी मनोहर है, इसका वर्तमान उतना ही आशान्वित | अतीत और वर्तमान जब विद्यापति, तुलसी, सूर, मीरा, कबीर, जायसी, बिहारी, घनान्द, भारतेंदु, दिनकर, मैथिलीशरण, प्रेमचंद, महादेवी, प्रसाद, निराला, पंत, नागार्जुन, राजकमलजैसे सबल कंधों पर आगे बढ़ी और अनवरत आगे बढ़ रही हो, फिरनिस्संदेह ही इसके स्वर्णिम भविष्य की आशा बंधती है |

भारतीय-साहित्य यदि शरीर है, तो उसकी आत्मा क्या है? या, भारतीय-साहित्य-शरीर को इतना पुष्ट बनाने वाले प्रमुख पौष्टिक तत्वों का संग्रह क्या है? क्याभारतीय-साहित्य एक स्वतंत्र इकाई है? वास्तव में भारतीय-संस्कृति और भारतीय-साहित्य एक दूसरे के पूरक समान हैं | यदि साहित्य शरीर है, तो संस्कृति उसकी आत्मा एवं यदि संस्कृति देह है तो साहित्य उसका रूह | *संस्कृति के चार अध्याय* में लेखक रामधारी सिंह दिनकर लिखते हैं कि*हमारा आधुनिक साहित्य हमारे प्राचीन साहित्य से किन किन बातों में भिन्न है और इस भिन्नता का कारण क्या है? कारण की खोज करता हुआ उन्नीसवीं शदी की सांस्कृतिक जागरण का हाल पढ़ने लगा | फिर जिज्ञासा और विस्तृत होगई और मन ने जानना चाहा कि भारतीय संस्कृति का सम्पूर्ण इतिहास कैसा रहा है?*[10]

एक प्रसिद्ध साहित्य का इतिहासकार यह कहता है कि साहित्य जनता की चित्तवृत्ति की अभिव्यक्ति है एवं प्रवृत्तियों, प्रभावों एवं प्रेरणाओं से साहित्य के स्वरूप में बदलाव होता गया; संस्कृति उन प्रवृत्तियों, प्रभावों एवं प्रेरणाओं की आधार है | बाणभट्ट की आत्मकथा की नायिका यदि यह कहने में समर्थ होती है कि *कविता श्लोक को नहीं कहते | हमारे यवन साहित्य में गद्य को काव्य की निकषा कहा है| छंद,तुक और अलंकार तो कविता के प्राण नहीं हैं | प्राण हैं, रस, विशुद्ध सात्विक रस* |[11]तो, यह दुस्साहस की शक्ति उसमें भारतीय-संस्कृति की उस चेतना से आता है, जिसने समय कीतमाम बाधाओं के बावजूद आगे बढना, उत्तरोत्तर विकासशील होते रहना ज़ारी रखा | बेशक, संस्कृति-गंगा की पवित्र धारा में समय ने कई दूसरी संस्कृतियों की नदियों, नदों, नालोंका संगम कर दिया, लेकिनपरस्पर विरोधी सी लगती हुई इन संस्कृतियों को भी भारतीय-संस्कृति-गंगा आत्मसात कर आगे बढ़ती रही, बहती रही |

[9]आचार्यरामचंद्र शुक्ल, 2017, हिंदी साहित्य का इतिहास, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, पृष्ठ सं- भूमिका
[10]रामधारीसिंह दिनकर, 1962, संस्कृति के चार अध्याय, उदयाचल प्रकाशक, आर्यकुमार रोड, पटना, पृष्ठ सं- 8
[11]हजारीप्रसादद्विवेदी, 2018, बाणभट्ट की आत्मकथा, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ सं-111

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 9, Issue 4, April - 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

भारतीय-संस्कृति-गंगाका गोमुख वैदिक संस्कृति को मानने में दो राय नहीं है | वैदिक-संस्कृति में अनेक स्थानों पर तप एवं तपोमय जीवन का विधान मिलता है | इस काल के दार्शनिकों को अपनी स्थिति एवं बुद्धि बनाए रखने के लिए ऐसी जीवन पद्धति का आविष्कार करना पड़ा | *कामायनी* में जयशंकर प्रसाद लिखते हैं कि

तप में निरत हुए मनु, नियमित- कर्म लगे अपना करने
विश्वरंग में कर्मजाल के सूत्र लगे घन हो घिरने |[12]

वह पुरातन भारतीय संस्कृति स्वतंत्रता की उपासक एवं विशुद्ध मानवीय संस्कृति थी | तब मानव का अपने जीवन से अगाध स्नेह एवं अपनी जीवन पद्धति पर बेहद श्रद्धा था | जीवनको दुश्चिंताओं, क्लेशों, कलहोंमेंज़ाया करने के बजाए प्रेम, सुख, लालसा, उपभोग आदि में लगाना उनका प्रमुख लक्ष्य हुआ करता था | जयशंकर प्रसाद लिखते हैं कि

चलते थे सुरभित अंचल सेजीवन के मधुमय निश्वास
कोलाहल में मुखरित होता देवजाति का सुख विश्वास |
सुख, केवल सुख का वह संग्रह, केंद्रीभूत हुआ इतना
छायापथ में नव तुषार का सघन मिलन होता जितना |
सब कुछ थे स्वायत्त विश्व के, बल वैभव आनंद अपार
उद्वेलित लहरों सा होता, उससमृद्धि का सुख संचार [13]|

देवजाति के इस जीवन पद्धति को रूपकों में ही सही, इतिहास माना जा चुका है | *कामायनी*की भूमिका में इसकी ऐतिहासिकता के प्रसाद जी ने पुख्ता एवं तर्कपूर्ण प्रमाण दिए हैं | देव, यक्ष, गन्धर्व, किन्नर आदि पौराणिक प्रमुख जातियों की संस्कृतियों को छायावादी कवियों से जीवन एवं जगत के प्रति अलग वैचारिक प्रतिबद्धता रखने वाले प्रगतिवादी, प्रयोगवादी कवियों ने भी रूपक रूप में बखूब चित्रित किया है | कवि नागार्जुन कविता *बादल को घिरते देखा है* में किन्नर-जाति के संपूर्ण सांस्कृतिक प्रतीकों को एक श्वास में गाते हुए लिखते हैं

शत-शत निर्झर-निर्झरणी कल
मुखरित देवदारु काननमें,
शोणित धवल भोज पत्रों से
छाई हुई कुटी के भीतर,
रंगबिरंगे और सुगंधित
फूलों से कुंतल को साजे,
इंद्रनील की मालाडाले

[12]जयशंकर प्रसाद, 1994, कामायनी, राजकमलप्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ सं-23
[13]जयशंकर प्रसाद, 1994, कामायनी, राजकमलप्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ सं-13

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 9, Issue 4, April - 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

शंख-सरीखे सुघर गलों में,
कानों में कुवलय लटकाए,
शतदललाल कमल वेणी में,
रजत-रचित मणि खचित कलामय
पानपात्र द्राक्षासव पूरित
रखेसामने अपने-अपने
लोहित चंदनकीत्रिपटी पर,
नरम निदाग बालकस्तूरी
मृगछालोंपर पलथी मारे
मदिरारुण आँखों वालेउन
उन्मद किन्नर-किन्नरियों की
मृदुलमनोरमअँगुलियों को
वंशी पर फिरते देखा है,
बादलको घिरते देखा है |[14]

अपने आरंभिक काल में जीवन एवं जगत के प्रति इतनी उदार भार तीय-संस्कृति मध्ययुग में आकर किंचिद जड़ताओं एवं अंधविश्वासों के प्रति आग्रही हो जाती है | सम्राट हर्षवर्द्धन के युग में इसकी स्वतंत्रता-प्रधान जीवनशैली स्वच्छंद सी हो जाती है | *बाणभट्ट की आत्मकथा* में हजारीप्रसाद द्विवेदी ने इसके पर्याप्त संकेत दिए हैं | उच्छ्रिन्खलता एवंसुख कीलालसा में अनुभूति का व्यापक अंतर है | अपने दैनिक जीवन में प्रत्येक मानव सुख की लालसा रखता है | यह लालसा जब महत्त्वाकांक्षा बन जाता है, तब इसका रूप विद्रूप हो जाता है | मध्यकालीन भारतीय संस्कृति में इन अराजक जीवन पद्धति की प्रधानता होते हुए भी आधुनिक काल तक आते- आते हमारा जनजीवन शिथिल व शांतिप्रियता को उन्मुख होने लगता है |

पौराणिक एवं आधुनिक जीवनपद्धति में एक जो सबसे महत्त्वपूर्ण परिवर्तन आया है, वह है पर्यावरण एवं प्रकृति के प्रति हमारी दृष्टि का बदल जाना| तुलसी, पीपल, बरगद आदि पेड़-पौधों की पूजा हमारी भारतीय-संस्कृति का विश्व को महत्त्वपूर्ण देन रहा है | *अशोक के फूल* निबंध में हजारीप्रसाद द्विवेदी जी ने तो अशोक-वृक्ष एवं इसके पुष्पों के पूजन तक को साबित किया है | कालांतर में प्रकृति हमारे लिए पूज्या न रहकर भोग्या बनती गई | कारणवश, आज हम सब विश्वव्यापी कोरोना-महामारी के चौखट पर आ खड़े हुए हैं | कामायनी में प्रसाद लिखते हैं

प्रकृति रही दुर्जेय, पराजित हम सब थे भूले मद में;

[14]नागार्जुन, 2019, प्रतिनिधि कविताएँ, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ सं-63

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 9, Issue 4, April - 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

भोले थे, हाँ तिरते केवल सबविलासिता के नद में|[15]

संस्कृतियाँ जब-जब दिशाहीन होकर संकुचित हुई है,*संचार*ने उसे फिर से जीवंत बनाया है | संस्कृतियों के संक्रमण काल में संचार की भूमिका अधिक प्रभावी होती है | संचार ने मानव-समाज को एक दूसरे के अधिक क़रीब आने, एक दूसरे की संस्कृतियों में नन्हें नन्हें हस्तक्षेप करने का ऐतिहासिक भूमिका अदा किया है | पौराणिक काल से सन्देश भेजने के कई माध्यमों का मानव खोज करता रहा है | कबूतरोंके माध्यम से संचार की व्यवस्था तो बहुत सालों तक चली | एक दूसरे को जानने एवं एक दूसरे से मीलों दूर रहते हुए बातचीत करने की प्रबल जिज्ञासु इच्छा ने हमें आज इन्टरनेट-युग तक पहुँचाया है, जो इस महामारी के काल में शिक्षा, राजनीति, आविष्कार आदि के लिए महत्त्वपूर्ण इकाई साबित हुई है | फणीश्वरनाथ रेणु की *संवदिया* कहानी संचार के क्षेत्र में तकनीक से आगमन के पहले की संवेदनशील कहानी है| संचार में संदेश ही नहीं, संदेशप्रस्तुत करने की कला का ध्यान रखना बहुत ज़रूरी होता है | *संवदिया* में रेणु संचार में बरती जानेवाली सावधानी को ईशारा कर संवाददाता की भूमिका पर लिखते हैं कि

संवदियाअर्थ!ात संवादवाहक!

हरगोबिन संवदियासंवाद पहुंचाने का काम सभी नहीं कर सकते। आदमी भगवान के घर से ही संवदिया बनकर... ! आता है। संवाद के प्रत्येक शब्द को याद रखना, जिस सुर और स्वर में संवाद सुनाया गया है , ठीक उसी ढंग से जाकर सुनाना, सहज काम नहीं। गांव के लोगों की गलत धारणा है कि निठल्ला , कामचार और पेटू आदमी ही संवदिया का काम करता है। न आगे नाथ , न पीछे पगहा। बिना मजदूरी लिए ही जो गांव गांव संवाद पहुंचावे-, उसको और क्या कहेंगे ? ...औरतों का गुलाम। ज़रा सी मीठी बोली सुनकर ही नशे में आ जाए-, ऐसे मर्द को भी भला मर्द कहेंगे ? किन्तु, गांव में कौन ऐसा है , जिसके घर की मां बेटी का संवाद हरगोबिन ने नहीं पहुंचाया-बहू- है।[16]

डाक, तार, दूरभाष, मोबाइल आदि की यात्रा करता हुआ संचार आज इलेक्ट्रॉनिक युग में बेहद तीव्र और संदेशों का गुच्छ संचारित करने वाला माध्यम बनकर भूगोल की सीमाओं को लाँघता हुआ राजनीति, शिक्षा, खेल, जनजीवन आदि के क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण योगदान दे रहा है | बहरहाल, संचार की इस गतिशीलता और तीव्रता के फायदे हैं, तो नुकसान भी कम नहीं है | आज सूचनाओं का हमारे पास ऐसा मकडजालसा बन गया है कि हमारे भ्रमित होने के खूब खतरे भी हैं | अँधा युग नाटक में महाभारत में कुरुक्षेत्र एवं राजमहल के बीच संचार का एकमात्र माध्यमसंजय की भूमिका को रेखांकितकरते हुए धर्मवीर भारती लिखते हैं कि

संजयतटस्थद्रष्टा शब्दों का शिल्पी है

पर वह भी भटक गया असमंजस के वन में

---

[15]जयशंकर प्रसाद, 1994, कामायनी, राजकमलप्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ सं-13

[16]फणीश्वरनाथ रेणु, 2016, अमृत संचय (फणीश्वरनाथ रेणु की दस श्रेष्ठ कहानियाँ), न्यू सरस्वती हाउस, नई दिल्ली, पृष्ठसं-56

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 9, Issue 4, April - 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

दायित्वगहन,भाषा अपूर्ण, श्रोता अंधे
पर सत्य वही देगा उनको संकट-क्षण में[17]

धर्मवीर भारती जी की इन पंक्तियों में वर्त्तमान मीडिया की संपूर्ण कार्यप्रणाली मानो क्षण भर में जीवंत हो उठता है | आज की मीडिया ने मानव-मूल्यों को ताख पर रखकर मानव-मनोविज्ञान को पशु-जीवन की युद्ध-लिप्सा में झोंखने का बीड़ा उठा लिया है| आज के मनुष्य का मनोविज्ञान मानो 'हैक' कर लिया गया हो |

साहित्य, संस्कृति एवं संचार के इस संक्रमण कालीक दौर में अपनी मनः स्थिति को संयमित कर ने एवं अपने मनोविज्ञान को साकार करने के पर्याप्त अवसर भी हैं, चुनौतियाँ भी| यह समय साहित्य, संस्कृति, संचार एवं इनके बरक्स बदलते मानव-मनोविज्ञान के पुनर्मूल्यांकन का है | परिवर्त्तन हमेशा नई संभावनाओं को जन्म देता है, विन्ध्वंश तो देता ही है | शमशेर बहादुर सिंह के शब्दों में

आर्य शौर्य धृति, बौद्ध शांति द्युति,
यवन कला स्मिति, प्राच्य कर्म रति,
अमरअमित प्रतिभायुत भारत
चिर रहस्य, चिरज्ञाता [18]|

हमारी सांस्कृतिक एवं साहित्यिक विरासत रही है | आजकी परिस्थियाँ विरल भले हों, अपनी ज्ञान-परंपरा से, अपनी संस्कृति से, अपनी मनोवैज्ञानिक चेतना से एवं अपनी विशद साहित्य से हम वैश्विक प्रतिनिधि बनने कापूरा माद्दा रखते हैं |

[17]धर्मवीरभारती, 2016, अन्धा युग, किताब महल, इलाहाबाद, पृष्ठ सं-20
[18]शमशेर बहादुर सिंह, 2018, प्रतिनिधि कविताएँ, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ सं-12